1. शीर्षक (Title of the thesis)

''अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक–आर्थिक विकास हेतु छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं के प्रभावों का मूल्यांकन''

(जशपुर जिले के संदर्भ में)

2. प्रस्तावना (Introduction)

मनुष्य स्वभावतः एक सामाजिक प्राणी है तथा वह अपने शारीरिक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए कुछ आर्थिक आवश्यकताओं का अनुभव करता है। इन आवश्यकताओं में सबसे आधारभूत है– भोजन, वस्त्र एवं आवास। बिना इनको प्राप्त किए मनुष्य का जीवित रहना कठिन हो जायेगा और उसका सामाजिक जीवन भी खतरे में पड़ जायेगा। मानव समाज (सभ्य या असभ्य) की एक विशेषता है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की सभी वस्तुएं स्वयं नहीं जुटा सकता। अतः भोजन, वस्त्र व आवास जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य संगठित होकर प्रयत्न करता है यह संगठित अर्थव्यवस्था को जन्म देते हैं। आदिम अर्थव्यवस्था में संगठन व सहकार्य एक अपरिहार्य बाध्यता होती है, क्योंकि शक्तिशाली प्रकृति पर विषय पाकर उत्पादन संभव करना, एक मनुष्य के वस की बात नहीं है। शिकारियों के झुण्ड, मछुवारों की टोलियां, पशुपालन के समूह, मजदूरों के झुण्ड यह सभी सहकार्य के लिए विख्यात है।

जनजाति वह समूह है जो सभ्यता काल के जीवन प्रतिमानों से संबंधित है। जनजाति के सदस्य अशिक्षित तथाकथित सभ्यता से दूर है। वह प्राचीन, आर्थिक और सामाजिक जीवन के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। विविध जंगलों, पर्वतों, पठारों आदि निर्जन क्षेत्रों में निवास करने के कारण और विशिष्ट सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक जीवन के विकास के कारण जनजातीय समाज में, अन्य समाजों की तुलना में अनेक विभिन्नताएं पायी जाती है। जनजाति प्रायः सभ्य

जगत से दूर दुर्गम स्थानों में निवास करते हैं, उनकी अपनी एक जनजातीय भाषा होती है, उनका नीग्रिटों, आस्ट्रेलायड एवं मंगोलायड में से किसी एक प्रजाति समूह से संबंधित होता है, उनके समूहों के नाम पारस्परिक व्यवहार के नियम होते हैं, उनका आदिम वर्ग होता है जिनमें भूतों तथा आत्माओं की पूजा का महत्वपूर्ण स्थान होता है तथा उनका सामान्य सांस्कृतिक एवं सुरक्षात्मक संगठन होता है। वे मदिरा एवं नृत्य के प्रति विशेष अभिरूचि रखते हैं। इनका स्वतंत्र संगठन होता है और वे जनजातीय व्यवसाय को अपनाते हैं। जैसे–उपयोगी प्राकृतिक वस्तुओं का संग्रहण, शिकार, वन से उत्पन्न वस्तुओं का संग्रहण करना आदि सम्मिलित है। जनजातीय समाज की एक मूल विशेषता उनका धर्म एवं जादू टोना है जो उनको उनकी जड़ों से जोड़े रखने का आधार है। धर्म और जादू–टोना मनुष्य की मात्र शरीरेत्तर आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता बल्कि ये सामंजस्य स्थापना का एक उपयोगी साधन भी होता है। जब तक इन्हें प्रतिस्थापित नहीं किया जाता तब तक इनका उन्मूलन विनाशकारी सिद्ध हो सकता है जहां आदिम जादू–टोना स्थानीय बीमारियों एवं उनके उपचार के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा रहता है वहीं धर्म सामाजिक मानकों एवं व्यवस्थापन से यह निश्चित है कि एक रूढ़ जीववाद, एक आदिम जनजाति के जीवन में जितना कुछ करता है, दूसरा कोई और धर्म नहीं कर सकता है क्योंकि जीववाद स्थानीय समस्याओं को दूर करने के स्थानीय प्रयास का प्रतिनिधित्व करता है। वे जनजातियॉ जो आधुनिक समाज के संपर्क में नहीं आई है, वे स्वयं ही आर्थिक समस्याओं को पैदा कर रही है। इसके परिणाम अत्यंत घातक होते हैं। स्थानांतरित कृषि के परिणामस्वरूप जनजातियों के समक्ष भुखमरी की स्थिति पैदा होती है या फिर उन्हें अपनी परंपरागत आर्थिक क्रियाओं का परित्याग करना पड़ता है। आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के लक्षण बड़े स्पष्ट होते हैं और प्रभाव बहुत गंभीर। यदि इन लक्षणों को ध्यान में रखकर समस्याओं के निवारण हेतु कदम न उठाएं जाएं तो जनजातीय पुनर्वास की कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती।

राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के उत्थान हेतु आदिवासी विकास विभाग के माध्यम से विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है,

जिनमें शिक्षा विषयक योजनाएं प्रमुख हैं। विभाग द्वारा शालेय शिक्षा के अंतर्गत आदिवासी विकासखण्डों में प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक स्तर तक की शालाओं का संचालन किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त मैट्रिक/पोस्ट मैट्रिक छात्रावास/ आश्रम शालाएं एवं उत्कृष्ट शिक्षा केन्द्रों की स्थापना, छात्रगृह, विभिन्न प्रकार की छात्रवृत्तियों का वितरण, प्रशिक्षण सह–उत्पादन केन्द्र, राहत एवं सामूहिक विवाह योजना तथा स्वरोजगार हेतु आदिवासी वित्त एवं विकास निगम के माध्यम से आर्थिक विकास की विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है।

जनजातीय अवधारणा

साधारण शब्दों में जनजाति वह समूह है जो पूर्व सभ्यताकाल के जीवन प्रतिमानों से संबंधित है। जनजाति के सदस्य अशिक्षित तथा कथित सभ्यता से दूर प्राचीन आर्थिक और सामाजिक जीवन के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। जंगलों, पर्वतों, पठारों आदि निर्जन क्षेत्रों में निवास करने के कारण और विशिष्ट सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक जीवन के विकास के कारण जनजातियों में अन्य सभ्य समाजों की तुलना में अनेकों विभिन्नताएँ पायी जाती है।

जनजाति से आशय उस सामाजिक समूह से है, जिसमें एकता की भावना हो, रक्षा की आवश्यकता हो, धर्म एवं राजनीतिक संगठन हो, गोत्रों का अलग अस्तित्व हो, एक सामान्य धर्म जनजातियों को अनेक नामों से जाना जाता है इन्हें आदिवासी आदिम, पर्वतीय जनजातियों एवं देश के मूलनिवासी आदि नामों से संबंधित किया है, किन्तु भारतीय संविधान में इन्हें अनुसूचित जनजातियों का नाम दिया गया है।

जनजाति की परिभाषा

''आदिवासी'' जनजातियॉं बहुत से तत्सम शब्दों से चाहे किसी भी क्षेत्र में भूमि पुत्रों का बोध होता हो, ये शब्द हमारे अपने समाज में अब दो अर्थों में प्रयोग होने लगे हैं। अकादमीय रूप से आदिवासियों को भले ही सबसे पिछड़ा मानव समूह माना जाये, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इन शब्द का उपयोग अब कूटनीति के

सबसे मजबूत खाल के लिए किया जा रहा है। समय–समय पर सामाजिक विज्ञान के अनेक विद्वानों ने आदिवासियों के संबंध में अनेक परिभाषायें दी है, जो निम्न है–

हॉबल का कथन है कि – ''एक जनजाति एक सामाजिक समूह है जो एक विशेष भाषा बोलता है तथा एक विशेष संस्कृति रखता है, जो इन्हें दूसरे जनजाति समूहों से पृथक करती है यह अनिवार्य रूप से राजनीतिक संगठन नहीं है।''

चार्ल्स विनिक –''एक जनजाति में क्षेत्र, भाषा, सांस्कृतिक समरूपता तथा एक सूत्र में बांधने वाला सामाजिक संगठन आता है। इसमें सामाजिक उपसमूहों जैसे गोत्रों या गांवों को सम्मिलित कर सकते हैं।''

3. शोध साहित्य का पुनरावलोकन

(Abrief review of the work already done in the field)

1. कालीयपेरूयल पी. एवं लोगनाथन पी. ने वर्ष 1989 में ''इलाकुरूचि गांव में कृषि साख का सूक्ष्म अध्ययन'' शीर्षक से किया गया। उन्होंने अपने अध्ययन में कृषि उपज एवं कृषि लागत का अनुमान लगाया है। कृषि साख के क्षेत्र में विभिन्न साख संस्थाओं के दायित्वों को सुनिश्चित किया है।

उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि–

(1) छोटे किसान अपने कृषि वित्त की पूर्ति 10 प्रतिशत तक ही पूरा करने में समर्थ होती हैं जबकि अन्य कृषक अपनी कृषि की पूर्ति 25 प्रतिशत तक पूरा करने में समर्थ है। इससे निष्कर्ष निकाला गया कि छोटे किसान कृषि के लिये आवश्यक वित्त स्वयं जुटाने में प्रायः असमर्थ होते हैं।

---

1. Dr. P. Kaliyaperumal and P.Loganathan "Agricultural Credid in Elakarichi Village- A Micro Analysis "Indian Coop. Review vol. XXII No. 2 Oct. 1989, pp. 166-171.

(2) वाणिज्यिक बैंक एवं कृषि साख सहकारी समिति के द्वारा किसानों को उनकी कुल ऋण आवश्यकता की 30.98 प्रतिशत की पूर्ति की गयी। इसमें वाणिज्यिक बैंक का योगदान 47.97 प्रतिशत तथा सहकारी समिति का योगदान 32.92 प्रतिशत था। शेष 13.12 प्रतिशत ऋण की प्राप्ति निजी स्त्रोत महाजनों–मित्र एवं रिश्तेदारों से प्राप्त किए थे। इस प्रकार कृषकों की 94 प्रतिशत ऋण आवश्यकता की पूर्ति हुई शेष 6 प्रतिशत ऋण आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पायी। इस प्रकार कृषकों की साख आवश्यकता एवं बैंकों की साख पूर्ति में बहुत अधिक अंतराल है। कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि के लिए इस अंतराल की पूर्ति आवश्यक है।

2. **शर्मा, डॉ. बी.डी.** ने अपने शोध कार्य में यह निष्कर्ष निकाला कि आदिवासी क्षेत्रों में संचार एवं परिवहन साधनों का पूर्णतया अभाव है, यह आदिवासियों की सांस्कृतिक और आर्थिक उन्नति में बाधक तत्व है। परिणाम स्वरूप इनके संचार (यातायात एवं परिवहन के साधन) अभाव में इन्हें (आदिवासियों को) अपनी उत्पादित वस्तुएं बहुत सस्ते दामों पर स्थानीय व्यापारियों को बेचनी पड़ती है, और बाहर से आने वाली इनकी आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु इन्हें महंगी खरीदनी पड़ती है।

3. **दास, श्री बी.कुमार** (1984) ने आदिवासी अर्थव्यवस्था के विकास पर अपना शोध कार्य सम्पन्न किया जिसमें पिछले 35 वर्षों से (आदिवासियों के विकास हेतु) क्रियान्वित की जा रही योजनाओं की कमियों पर दृष्टिपात किया। इन्होंने अपने शोध कार्यों में यह निष्कर्ष निकाला कि आदिवासी विकास कार्यक्रम की योजनाएं, एकीकृत विकास कार्यक्रम में बैलों की पूर्ति, बीज खाद पूर्ति, आवासीय समस्या आदि पर विशेष छूट नहीं दी जा सकी है। गैर आदिवासी लोग (वे लोग जो

---

2. डॉ. शर्मा, बी.डी. – ''आदिवासी विकास एक सैद्धांतिक विवेचन'' म.प्र.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, पृ. 123.
3. दास, पी.कुमार– डेवलपमेंट ऑफ ट्राइबल एकोनामी ''ए स्पेशल एप्रोज– कुरूक्षेत्र वाल्यूम 34(4) जनवरी 1986 पृष्ठ 13–16.

निर्धन नहीं है) इन योजनाओं से लाभ उठा लेते हैं और आदिवासी समुदाय (अशिक्षित होने के कारण) इन लाभों से वंचित हो जाते हैं। योजनाओं पर भूमि निर्वसन, जंगल काटना तथा शहरी व्यक्तियों द्वारा शराब बेचना आदि समस्याओं को सम्मिलित नहीं किया गया, क्योंकि ये समस्याएँ आदिवासियों के अर्थव्यवस्था को आधुनिक बनाने में बाधा उत्पन्न करती है। श्रीदास ने सुझाव दिया है कि आदिवासी विकास कार्यक्रमों में पुनः सुधार की आवश्यकता है, ताकि आदिवासी समुदायों की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। आदिवासी क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों का विकास किया तथा आदिवासियों को तकनीकी शिक्षा देकर तथा उनकी रोजगार तथा आय में वृद्धि की जानी चाहिए और उसमें स्वयं ही विकास की भावना को जागृत करने की आवश्यकता है।

4. **चन्द्रमोहन, डॉ. पालीवाल** (1979) बस्तर जिले के आदिवासियों की ऋण ग्रस्तता पर शोध किया, जिसमें यह निष्कर्ष निकाला कि आदिवासी क्षेत्र में व्यापारी एवं दुकानदारों द्वारा जो कर्ज वितरण होता है वह नकद रूपये के अतिरिक्त वस्तुओं के रूप में भी होता है। स्थानीय भाषा में ऐसे ऋण को ''कंगाल बैंक'' का ऋण कहा जाता है। आपात काल लगने के पूर्व तक इस कंगाल बैंकों का जो आदिवासी क्षेत्रो में बहुत था, जो आपातकाल के समय तो लगभग समाप्त हो गया था परंतु आपातकाल के पश्चात् अब पुनः धीरे–धीरे सिर उठा रहा है। जहॉ तक सरकारी मान्यता प्राप्त साख संस्थाओं की भूमिका का प्रश्न है, वे आदिवासी अंचल में कार्य तो अवश्य कर रही है परंतु उनके कार्य की प्रगति अभी संतोषजनक नहीं मानी जा सकती।

5. हरिशचन्द्र, श्री उत्प्रेती (1979) ने अपने शोध में लिखा है कि व्यापारी लोग तथा साहूकारों ने इन प्रदेशों (आदिवासी अंचल) में जाकर इनकी अज्ञानता का फायदा

---

4. चन्द्रमोहन, डॉ. पालबाल– आदिवासी हरिजन आर्थिक विकास (बस्तर के विशेष संदर्भ में) नादर्न बुक सेन्टर नई दिल्ली 1986 पृ.–158
5. हरशिचन्द्र, उत्प्रेती भारतीय जनजातियॉ, सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र जयपुर, 1970, पृष्ठ– 157.

उठाकर शोषण करने में किसी प्रकार की कसर शेष नहीं रखी। इनकों रूपये उधार देकर मनमाना ब्याज वसूल किया।

6. **शर्मा, डॉ. वी.डी.** का मत है कि आदिवासी क्षेत्रों के वे गांव जो दुर्गम क्षेत्रों में स्थित है, जहां अभी सड़के नहीं पहुंची है, वहॉं श्रम व उत्पाद मूल्य प्राप्त नहीं होता जितना कि सड़क के किनारे स्थित बड़े गांवों के उत्पाद व श्रम प्राप्त कर लेते हैं। इसीलिए कहा जाता है कि सड़क का लाभ सड़क के जैसे–जैसे हम दूर होते जाएंगे वैसे–वैसे कम होता जाएगा। डॉ. शर्मा ने गैर आदिवासी समुदायों को ''प्रवासी'' शब्द से सम्बोधित करते हुए कहा है कि ''प्रवासी वर्ग'' बहुलतः सड़क के किनारे बड़े–बड़े ग्रामों में रहते हैं और ये लोग नई सेवाओं के मूल्यों को पहचानते हैं।

7. **वर्ष (1978)** में कृषि संचालनालय मध्यप्रदेश भोपाल द्वारा बस्तर जिले में आदिवासियों एवं गैर आदिवासियों की खरीफ फसल (धान) के उत्पादन का सर्वेक्षण किया गया, जिसमें पाया गया कि आदिवासी हरिजन समुदायों में खरीफ के अंतर्गत धान के प्रतिशत क्षेत्र को प्रभावित करता है। जैसे–जैसे औसत भूमि का आकार कम होता गया है, धान का क्षेत्र भी प्रभावित होता गया है। जबकि अन्य गैर आदिवासी समुदायों में धान का क्षेत्र परिवार के औसत आकार की तुलना में औसत भू आकार से अधिक प्रभावित होता है। क्योंकि गैर आदिवासी समुदाय अपेक्षाकृत सम्पन्न होने के कारण पारिवारिक श्रम की कम किराए पर श्रम प्राप्त करके पूरी कर लेता है। सर्वेक्षण के अनुसार धान की क्षेत्र संपूर्ण बस्तर जिले में 62.15 प्रतिशत था तथा शेष क्षेत्र में अन्य फसलें थी। इसी प्रकार कृषि संचालनालय भोपाल द्वारा वर्ष 1975 एवं 1977 में बस्तर जिले के दंतेवाड़ा एवं

कोंटा तहसीलों का एग्रो इकोनामिक सर्वे किया गया जिसके परिणामस्वरूप यह निष्कर्ष निकाला गया कि ''आदिवासी जिले बस्तर में धान का प्रतिशत क्षेत्र आदिवासियों की अपेक्षा अन्य समुदायों का अधिक रहता है। उल्लेखनीय है कि

6. शर्मा डॉ. वी.डी., आदिवासी विकास एक सैद्धांहितक विवेचन म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल पृष्ठ 189.

7. कृषि सांख्यिकी, कृषि संचालनालय मध्यप्रदेश भोपाल वर्ष 1978, पृष्ठ–8 एवं 41.

खरीफ धान का क्षेत्र आदिवासियों का दंतेवाड़ा अध्ययन में 59.63 प्रतिशत तथा कोंटा अध्ययन में 68.4 प्रतिशत था, जबकि गैर आदिवासियों का दंतेवाड़ा अध्ययन में 65.10 प्रतिशत तथा कोंटा अध्ययन में 85.91 प्रतिशत पाया गया था।

8. प्रसाद, डॉ. रोहिणी एवं बाजपेयी, डॉ. ए.डी.एन. ने वर्ष (1988) बस्तर जिले के आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत रोजगार तथा आय नामक विषय पर शोध किया। इनका यह शोध प्राथमिक समूहों पर आधारित था जिसमें 160 न्यादर्श परिवारों का प्रश्नावली के माध्यम से सर्वेक्षण किया गया और सांख्यिकी यंत्रों के द्वारा विश्लेषित किया गया। अध्ययन के निष्कर्षानुसार आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत 90.87 प्रतिशत आदिवासी 85.36 प्रतिशत हरिजन एवं 80.00 प्रतिशत गैर आदिवासी रोजगार प्राप्त किए। आदिवासियों की प्रतिशत सर्वाधिक था जिसका कारण यह था कि यह समुदाय दैनिक निर्मित होने वाली वस्तुओं की और अधिक उन्मुख हुआ क्योंकि वे वस्तुएं शीघ्र लाभ प्रदान करने वाली होती है।

9. पटेल, श्री एम.एल. ने मध्यप्रदेश के आदिवासी जिला मण्डला का सूक्ष्म अध्ययन (1973) कर पिछड़े हुए क्षेत्रों की पहचान हेतु निम्न आधार प्रस्तुत किए–

1. यातायात तथा संचार के साधनों की कमी
2. बाजार केन्द्र से दूर एकांतवासी आदिवासी क्षेत्र
3. वित्तीय संस्थाओं की कमी
4. मानवीय स्त्रोतों का अल्प विकास
5. कुछ महत्वपूर्ण स्त्रोतों का श्रम विदोहन आदि

इस शोध में श्री पटेल ने निष्कर्ष निकाला कि इन पिछड़े क्षेत्रों में प्रशासनिक, वित्तीय, यातायात व्यापार, विस्तार सेवाएँ (दैनिक बाजार थोक बाजार तथा साप्ताहिक बाजार) डाक सुविधाएँ शिक्षा स्वास्थ्य कृषि आदि पूर्ति सेवाएं तथा विद्युत व्यवस्था आदि को जितनी अधिक मात्रा में स्थापित किया जाएगा उतना ही अधिक इन पिछड़े क्षेत्रों का विकास होगा।

---

8. प्रसाद, डॉ. रोहिणी (बाजपेयी, डॉ. ए.डी.एन.)– ''शोध पत्र बस्तर जिले में आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत रोजगार और आय एक अध्ययन–खादी ग्रामोद्योग ग्रामीण अर्थ विषय पत्रिका अंक 8 मई, 1989 पृष्ठ 342–346.
9. पटेल, एम.एल.–''इन्टीग्रेटेड डेवलपमेंट विथ स्पेशल रिफ्रेंस टू मंडला ट्राइबल डिस्ट्रिक ऑफ मध्यप्रदेश इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकलचरल एकोनामिक्स 28 (4) अक्टूबर–दिसम्बर 1973, पृष्ठ 54–55.

10. **राठौर, आर.एस.** ने अपने शोध पत्र में वर्ष 1979 में जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर द्वारा ''आदिवासियों के विकास में आर्थिक बाधाएं'' विषय पर आयोजित सेमीनार में यह निष्कर्ष निकाला था कि शासन द्वारा आदिवासियों को अनुत्पादक कारणों के लिए कोई अनुदान राशि नहीं दी जाती है। ऐसी स्थिति में आदिवासियों को महाजनों से भारी ब्याज पर ऋण लेने के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं सूझता। महाजन ऋण देने के साथ देय राशि अधिक लिखकर तथा ब्याज की उंची दर लगाकर उनसे ब्याज के रूप में अच्छे पशु व फसल हड़पता रहता है।

इसी प्रकार वर्ष 1977–78 में संचालनालय आदिम जाति क्षेत्रीय योजनाएं मध्यप्रदेश के द्वारा अपनी एक रिपोर्ट में लिखा है कि आदिवासी समुदायों के पास आय के स्त्रोत अपर्याप्त होने से आदिवासी सरलता से साहूकारों के शिकंजों में आ जाते हैं। वे अनिवार्य आवश्यकताओं के लिये तो कर्ज लेते ही हैं, परंतु सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भी नगदी तथा वस्तुओं के रूप में कर्ज लेते हैं।

मई 1960 में सावित्री विल्थरे भी अपने शोध में इस निष्कर्ष पर पहुंची कि आदिम जाति क्षेत्रों में यातायात की नितांत कमी होती है, जिसके कारण आदिवासी समुदाय काफी लाभों से वंचित रह जाते हैं। इसीलिए आदिवासी क्षेत्रों में संचार साधनों के अंतर्गत सर्वप्रथम सड़क निर्माण पर जोर दिया जाना चाहिए तथा अधिक से अधिक आदिवासी क्षेत्र के आदिवासी ग्रामों को सड़कों से जोड़ने का प्रयास किया जाना चाहिए।

आदिवासियों के आयुक्तों की सातवीं रिपोर्ट 1958–59 में भी इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि ''आदिवासी अंचल में संचार सुविधाओं का नितांत अभाव होता है।

11. **चटर्जी, सी.ए.** 1973 ने क्षेत्रीय विकास योजनाओं को परिभाषित करने की शर्तों के संबंध में एक अध्ययन सम्पन्न किया जिसमें उन्होंने सुझाव दिया कि आर्थिक विकास के क्षेत्रों का निर्धारण के लिए आर्थिक दशाओं के तथा जनसंख्या के जीवन स्तर पर सजातीयता होनी चाहिए। साथ ही निर्धनता से ऊपर लाने हेतु निर्धनता रेखा तथा प्रति व्यक्ति व्यय की परिभाषा निर्धारित की जावे, जिसे जीवन स्तर का न्यूनतम मानदंड (स्तर) माना जाए और विकास योजनाओं का स्वरूप (प्रकृति) गांवों की आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

---

10. राठौर, आर.एस. शोधपत्र ''आदिवासियों के विकास में आर्थिक बाधाएं'' सेमीनार, नवम्बर 1979 जे.एन. कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर, पृ. 4.

11. चटर्जी, ए. ''ए क्राइटेरियन फार डिपाइनिंग एरिया फार एरिया डेवलपमेंट प्लानिंग'' इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल एकोनामिक्स 28(4) अक्टूबर–दिसम्बर 1975, पृ. 150.

12. **मजुमदार, श्री ए.के.** 1975 ने कृषि से संबंधित योजनाओं तथा इन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया, जिसमें पाया गया कि यह योजनाएं आर्थिक क्षेत्रों में विकृति तथा असमानताओं को बढ़ावा देने में सहायक हुई। भारी खर्च के बावजूद भी कृषि का विकास नहीं हो पाता। सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा अन्य सघन योजनाएँ बुरी तरह से असफल रही है, क्योंकि मुश्किल से 10 प्रतिशत श्रमिकों को ही रोजगार प्राप्त हो सका, शेष 10 श्रमिक बेरोजगार व गरीबी की रेखा पर बने रहे। ग्रामीण भारत का विकसित भाग इन योजनाओं का पूरा लाभ तो ले लिया, परंतु पिछड़े हुए आदिवासी क्षेत्र और अधिक पिछड़े रह गए। कम से कम 10 करोड़ लोग जीवन मृत्यु से जूझ रहे हैं, अतः हमको योजना के प्रारूप में परिवर्तन करने की अत्यंत आवश्यकता है और जी.एन.पी. की तुलना में जी.एस.पी. को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।

13. **प्रसाद, श्री ए.जी.** 1978 ने वाल्टेयर के आदिवासी क्षेत्रों में गिरिजन विकास प्राधिकरण द्वारा क्रियान्वित कार्यक्रमों के फलस्वरूप संभावित लाभ तथा उसके अंतर के कारणों का अध्ययन किया, जिसमें यह निष्कर्ष निकाला गया कि किसी भी योजना की सफलता के लिए अधिकारियों तथा अभिकरणों की विशेष भूमिका होती है। अतः योजनाओं को आदिवासी क्षेत्रों में लागू करने के लिए योजनाओं की वास्तविक लाभ व उनके प्रभाव के अनुमान तथा आय, स्थानीय दशाएं इनपुट्स की उपलब्धता तथा अन्य सुविधाओं जैसे बाजार, आदिवासियों की रूचि और व्यावहारिकता आदि पर विशेष ध्यान जाना चाहिए, तथा इन्हीं तथ्यों को आधार मानकर योजना का निर्माण किया जाना चाहिए।

14. कुमार (2001) ने बिहार की कोरवा जनजाति के विकास कार्यक्रम का मानव शास्त्रीय अध्ययन किया, जिसमें उनके उत्पत्ति, भाषा तथा प्रजाति, परिवार, नातेदारी, जीवनचक्र, कृषि तथा आर्थिक संगठन का अध्ययन किया है।

15. भट्ट,सत्यप्रसाद एवं सिंह, रामगोपाल (2005) ने मध्यान्ह भोजन योजना का जनजातीय छात्र–छात्राओं पर प्रभाव का अध्ययन किया, जिसमें उन्होंने पिछड़े

---

12. मजुमदार, ए.के.– ''एंटीग्रेटेड एरिया डेवल. विथ रिफरेंस टू डिस्ट्रिक्ट प्लानिंग'' इंडियन जनरल ऑफ एग्रीकल्चरल इकोनामिक्स 28(4) अक्टूबर–दिसम्बर 1973, पृ. 55–56.

13. प्रसाद श्री ए.जी. – प्लानिंग एंड परफार्मेंस ऑफ सोशल डेवलपमेंट प्रोजेक्ट्स ए केश स्टडी ऑफ डेयरिंग स्कीम इन ट्रायवल एरियास'' इंडियन जर्नल एग्रीकल्चर एकोनामिक्स 33(4), अक्टूबर 1978, प्र. 252–255.

आदिवासी क्षेत्रों की प्राथमिक शालाओं में प्रदान की जाने वाली शिक्षा व मध्यान्ह भोजन का छात्र–छात्राओं की शैक्षणिक एवं पोषण स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया है।

4. उद्देष्य (Objective)

1. न्यादर्श अनुसूचित जनजातीय परिवार के आर्थिक एवं सामाजिक विशेषताओं का अध्ययन।
2. राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक–आर्थिक विकास हेतु चलाए जा रहे योजनाओं का अध्ययन करना।
3. इन योजनाओं का अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक–आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन करना।
4. अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।

5. प्रस्तावित कार्य का क्षेत्र का उल्लेखनीय योगदान (Noteworthy contribution in the field of proposed work)

जनजाति विकास से संबंधित अनेक कार्य समय–समय पर किये जा रहे हैं। छ.ग. राज्य जनजाति बहुल क्षेत्र है, छ.ग. सरकार द्वारा राज्य में विभिन्न योजनाएं चलायी जा रही है इन योजनाओं के द्वारा सरकार जनजातियों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास कर रही है। सरकार की योजनाओं का मुख्य उद्देश्य जनजातियों में रोजगार के अवसर, शिक्षा का विस्तार, स्वस्थ्य सुविधा व जीवन स्तर को ऊंचा है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में जशपुर जिले के जनजातीय वर्ग विशेष के संदर्भ में अध्ययन किया जाना है। जशपुर जिले में सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन एवं लाभान्वित लोगों का विश्लेषण करना कार्य का उद्देश्य है।

6. प्रस्तावित अध्ययन पद्धति (Proposed methodology)

प्रस्तुत शोध प्रविधि की विषय–वस्तु प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित है। शोध से संबंधित समंक जिनका प्रकाशन किसी भी स्तर पर नहीं हो सका है, उनका संकलन व्यक्तिगत पहुंच की सीमा के भीतर करने का प्रयास किया जाएगा। समंकों के संग्रहण के समय इस बात का विशेष ध्यान दिया जाएगा कि समंक एवं ंसूचनाएं अद्यतन हो। शोध में पुस्तकें, शोध प्रपत्र तथा सरकारी संस्थाओं एवं गैर सरकारी संस्थाओं से प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं का सहारा लिया जाएगा।

समंकों का संकलन

शोध के लिये तथ्यों का संकलन प्राथमिक तथा द्वितीय सामग्री के रूप में निम्नानुसार किया जाएगा–

I. **प्राथमिक समंक–** प्राथमिक समंकों के लिए अनुसूची का निर्माण किया जाएगा, जिनका समंक संकलन के पूर्व परीक्षण किया जाएगा।

II. **द्वितीयक समंक–** द्वितीयक समंकों का संकलन इन शासकीय स्त्रोतों से संकलित किया जाएगा। जैसे–जिला कार्यालय, ग्रामों से संबंधित समंक, टाउन प्रायमरी सेन्सस आदि के माध्यम से संकलित किया जाएगा।

आंकड़ो का विश्लेषण

अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार आंकड़ों का विश्लेषण निम्न सांख्यिकीय तकनीकियों का प्रयोग किया जायेगा जैसे– प्रतिशत, माध्य, सहसंबंध एवं रेखाचित्र।

अध्ययन क्षेत्र

छत्तीसगढ़ राज्य के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित जशपुर जिला है, जो 1998 में रायगढ़ जिला से अलग होकर एक जिला के रूप में अस्तित्व में आया। 2001 की जनगणना के अनुसार यहॉ की कुल जनसंख्या 743160 है, जिसमें अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 469953 है, जो कुल जनसंख्या का 63% है। जशपुर

जिला में आठ विकासखंड है – जशपुर, मनोरा, कुनकुरी, दुलदुला, फरसाबहार, पत्थलगांव, कांसाबेल, बगीचा।

इनमें से अध्ययन के लिए दो विकासखंड का चयन किया गया है – कुनकुरी व बगीचा।

अध्ययन की सीमा

छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा अनेक योजनाएं चलाई जा रही है, जो इस प्रकार है–

1. छात्र भोजन सहाय योजना
2. जवाहर आदिम जाति उत्कर्ष विद्यार्थी योजना
3. निःशुल्क सायकिल प्रदाय योजना
4. आदर्श शाला पुरस्कार
5. छात्रावासी विद्यार्थियों के लिए विशेष शिक्षण केन्द्र (ट्यूशन) योजना
6. आदिवासी सांस्कृतिक दलों को सहायता योजना
7. छात्रावासी विद्यार्थियों की कम्प्यूटर प्रशिक्षण योजना
8. युवा कैरियर निर्माण योजना
9. स्वस्थ तन–स्वस्थ मन (स्वास्थ्य सुरक्षा) योजना
10. पायलेट एवं एयर होस्टेज योजना
11. सामूहिक विवाह योजना
12. ग्राम विकास योजना
13. ग्राम गौरव योजना

संदर्भ वर्ष–

संदर्भ वर्ष 2011–12 को लिया है।

7. प्रस्तावित अध्ययन के द्वारा परिणाम का प्रत्याषा (Expected out come of the proposed work)

शोध प्रबंध इस परिकल्पना पर आधारित है–

छ.ग. सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं का अनुसूचित जनजाति परिवार के सामाजिक–आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

8. अध्ययन की रूपरेखा (Chapterization)

अध्याय – एक

इस अध्याय के अन्तर्गत प्रस्तावना, अवधारणा, शोध का उद्देश्य, शोध का क्षेत्र, शोध पद्धति, शोध परिकल्पना आदि का अध्ययन किया जायेगा।

अध्याय – दो

शोध साहित्य का पुनरावलोकन

अध्याय–तीन

अनुसूचित जनजातीय परिवारों की सामाजिक एवं आर्थिक विशेषताएं–

3.1 परिवार की संरचना

3.2 आयु संरचना

3.3 आवास

3.4 विवाह

3.5 शैक्षणिक स्तर

3.6 स्वास्थ्य

3.7 ऋण ग्रस्तता

3.8 वर्तमान रोजगार की प्राप्ति

3.9 पारिवारिक बजट

3.10 गरीबी का निर्धारण

अध्याय–चार

छ.ग. राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति के लिए चलाई जा रही योजनाओं का अध्ययन

अध्याय–पांच

राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का जनजातियों के सामाजिक आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण–

5.1 छ.ग.सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं का उनके सामाजिक स्थिति पर प्रभाव।

5.2 छ.ग.सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं का उनके आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

अध्याय–छः

छ.ग. सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन तथा इन्हे दूर करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्याय–सात

अध्ययन का सारांश, निष्कर्ष एवं सुझाव।

संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography in standard format)

1. अटल, योगेश – आदिवासी भारत, 1985
2. उपाध्याय, विजयशंकर एवं गया पाण्डेय – ''जनजातीय विकास'', 2002
3. गोयल, अनुपम – ''भारत में आर्थिक विकास, नियोजन तथा सांख्यिकी– शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी 1995, पृ.नं. 92.
4. साहू, चतुर्भुज – ''आदिम जनजाति पहाड़िया के लिए उन्नयन प्रयास'' वन्यजाति, अप्रैल 1995, अंक 2, पृष्ठ सं. 6–12.
5. सारस्वत, ऋतु – ''भारतीय जनजातियॉ : समस्याएं एवं सामाधान, कुरूक्षेत्र, दिसम्बर 2005, पृष्ठ संख्या 17–18.
6. दुबे, भरत कुमार – ''विकास की राह पर जनजातीय समाज'' कुरूक्षेत्र, दिसम्बर 2008, पृष्ठ सं. 20–23.
7. त्रिपाठी, बद्री विशाल – ''जनजातीय उपयोजना'' कुरूक्षेत्र दिसम्बर 2008, पृष्ठ संख्या 24–28.
8. गौतम, नीरज कुमार – ''जनजातियों का विकास और सरकारी प्रयास'' कुरूक्षेत्र दिसम्बर 2008, पृष्ठ संख्या 34–38.
9. कटारिया, एस.के. – ''जनजाति कल्याण, नीति एवं प्रशासनिक व्यवस्था'' कुरूक्षेत्र, दिसम्बर 2008, पृष्ठ संख्या 39–41.
10. प्सूका – ''जनजातीय विकास में तेजी'' कुरूक्षेत्र, फरवरी 2008, पृ. 41.
11. शर्मा एवं उमा – सहकारिता एवं सामुदायिक विकास
12. घोष, जी.के. – ''ट्राइबल एण्ड देयर कल्चर'', खण्ड 3, 1942
13. भटनागर एवं अन्य – भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था
14. अग्रवाल, डॉ. अमर नारायण – भारतीय अर्थव्यवस्था

15. राव, डॉ. बी.एस. एवं गोडांवार	–	मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास
16. राय, के.के.	–	बस्तर जिले में ग्रामीण ऋणग्रस्तता समस्या एवं समाधान
17. पाण्डेय, ममता	–	''जनजातीय जीवन एवं वनस्पति'' वन्यजाति, अप्रैल 1997, अंक 2 पृष्ठ नं. 18–19.
18. मिश्रा, एस	–	भारत के आदिवासी, 1975
19. सरकार, प्रमोद कुमार	–	''आर्थिक विकल्प के अभाव में जनजातीय आखेटक जनजाति'' वन्य जाति जुलाई, 2000 अंक नं. 3 पृ.सं. 29–32.
20. उपाध्याय, विजय शंकर एवं विजय प्रकाश शर्मा	–	''भारत की जनजातीय संस्कृति'', 2004.

शोध निर्देशक

डॉ. (श्रीमती) राधा पाण्डेय
प्राचार्य
शासकीय सी.एल.सी. महाविद्यालय
पाटन, दुर्ग (छ.ग.)

सह–शोध निर्देशक

प्रो. ए. के. पाण्डेय
अर्थशास्त्र अध्ययनशाला
पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर (छ.ग.)

शोध छात्रा

कु. अनुराधा तिर्की
अर्थशास्त्र अध्ययनशाला
पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर (छ.ग.)

विभागाध्यक्ष

प्रो. आर. प्रसाद
अर्थशास्त्र अध्ययनशाला
पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर (छ.ग.)